RESEARCH REVIEW JOURNALS
RCTRM-2018
OCT- 2018
Special Issue

ISSN: 2455-3085 (Online)
RESEARCH REVIEW International Journal of Multidisciplinary
www.rrjournals.com [UGC Listed Journal]

गुरमति संगीत में प्रयुक्त तन्त्राी वाद्यों का विश्लेषणात्मक अध्ययन

Dr. Reena Sharma

ARTICLE DETAILS
Article History
Published Online: 20 Oct 2018

Keywords
सुम गुरमति संगीत वाद्यों का संगीत

ABSTRACT
इस शोध्पत्रा में वाद्यों का संगीत, वैज्ञानिक विश्लेषणात्मक इनकी प्रकृति व गुरमति संगीत में इनकी उपयोगिता के संदर्भ में एतिहासिक दृष्टिकोण से किया गया है। यह शोध कार्य केवल तंत्राी वाद्य (रबाब व सारिन्दा) तक ही सीमित है, इसलिए गुरमति संगीत में प्रयुक्त तन्त्राी वाद्यों की उपयोगिता व उनके महत्व का संगीत वैज्ञानिक विश्लेषण किया गया है। इस शोध्पत्रा में किया गया अनुसन्धन कार्य, इन तंत्राी वाद्यों के महत्व को दर्षाते हुए इन वाद्यों के पुनरुत्थान का अनुगमन करता है।

रबाब

रबाब एक तन्त्राी वाद्य है। यह सरोद से मिलता जुलता वाद्य है। भारत के पश्चिमी ेत्राों पंजाब और कश्मीर में इसे बजाया जाता था। 15वी शताब्दी में रबाब का भारतीय संगीत में की उपयोग किया जाता था। मध्यकाल में रचित अहोबलकृत संगीत पारिजात में रबाब का उल्लेख आया है। उस से पूर्व किसी भी ग्रन्थ में रबाब का उल्लेख नहीं आया है। सोरीन्द्रमोहन ठाकुर के 'वाद्य–कोश' के अनुसार अरब देश के ग्रामवासी अब्दुल्ला ने 'रुबेब' वाद्य का आविष्कार किया। उसी का प्रचलन बाद में 'रबाब' नाम से हुआ। रुद्रवीणा को भी रबाब का ही एक रूप माना जाता है। यह भी हो सकता है कि रबाब को ही रुद्रवीणा कहा जाने लगा हो। कुछ विद्वान तानसेन को ही रबाब के रचियता मानते हैं। परन्तु यह अवधरणा पूर्णतया गलत प्रतीत होती है क्योंकि रबाब का उल्लेख तानसेन से पूर्व कबीर ने अपनी साखियों में किया है। हॉलाकि उनमें रबाब का रूप स्पष्ट नहीं होता।

आईने अकबरी में भी रबाब का जिक्र मिलता है जिसमें छह तारें, कुछ में बारह तारे और कुछ में अठारह तारें तक होती थी। सतारहवी शताब्दी ने अहोबलकृत 'संगीत पारिजात' में 'रबाब' शब्द को सांस्कृति के 'रवा' से उत्पन्न हुआ माना है जिसका अर्थ है ध्वनि। संगीत पारिजात के वाद्यप्रकरण में रबाब का उल्लेख इस प्रकार आता है–ख वह ति यद्यस्मात्ततों खावहः स्मृत।।124।।

दसवीं शताब्दी में मध्य एशिया में जिस रबाब का उल्लेख प्राप्त होता है वह गज से बजाया जाता था। रबाब, सरोद और सारंगी के मध्य का वाद्य है। जिस रबाब को गज से बजाया जाता था वह सारंगी की तरह था और जिस रबाब को जवा से बजाया जाता था वह सरोद की भाँति था।

सारिंदा

''सारिन्दा'' वाद्य उत्तरी भारत और बिहार के कुछ भागों में प्रयुक्त होता है। यह अपने आकार के कारण एक विशेष वाद्य है जिसे कमान से बजाया जाता है। सारिन्दा का आकार प्रकार इस तरह का होता है कि यह दो भागों में बँटा हुआ लगता है। नीचे का भाग छोटा होता है और ऊपर का भाग अपेाकृत कुछ बड़ा और पंख का आकार लिये होता है।

सारिन्दा के आविष्कारक के बारे में निश्चित रूप से कुछ नहीं कहा जा सकता। काहन सिंह नाभा के अनुसार सारिन्दा का आविष्कार गुरु अर्जुन देव ने किया है। जबकि शाहिन्दा बेगम के अनुसार सारिन्दा का आविष्कार गुरु अमरदास ने किया है। सारिन्दा दोंणी और उत्तरी भारत में समान रुप में पाया जाता हैं। सारिन्दा उच्च वर्ग में नहीं बजाया जाता जबकि निम्न वर्ग में यह अत्यध्कि प्रयुक्त किया जाता है।

प्राक्कथन

गुरमति संगीत प्रबन्ध के अध्ययन से प्रमाणित है कि गुरमति संगीत विषाल एतिहासिक परम्परा रखता है। इस का मूल स्रोत और आधर श्री गुरु ग्रन्थ साहिब ही है। श्री गुरू ग्रन्थ साहिब वाणी और दर्षन के विषय पर जहां सिक्ख ध्र्म का आधार ग्रन्थ षब्द कीर्तन पर एक निष्चित संगीत प्रबन्ध भी हमें इसी से प्राप्त हुआ है। श्री गुरू ग्रन्थ साहिब की इसी वाणी में षब्द और संगीत सैद्धान्तिक और व्यवहारिक सुमेल किया गया है जोकि गुरमति संगीत की भिन्न–भिन्न गायन षैलियों, गुरमति संगीत के भिन्न–भिन्न संगीतिक संकेत षब्द कीर्तन की व्यवहारिक पेषकारी के लिये विषेष अर्थ रखते हैं और इन की सम्पूर्ण रूप में सम्मलित समाहित कार्यषीलता एक निष्चित संगीत प्रबन्ध का उद्भव करते हैं। गुरमति संगीत में प्रयुक्त होने वाले वाद्यों में विषेष रूप में तन्त्री वाद्य गुरमति संगीत की रागात्मकता को कायम रखने में सहायक होते हैं। इसी कारण श्री गुरु नानक देव जी से ले कर भिन्न–भिन्न गुरु साहिबान ने भिन्न–भिन्न वाद्यों को षब्द कीर्तन के लिये अपनाया, विकसित किया और सरप्रस्ती दी।

इस षोधपत्र में गुरमति संगीत प्रयुक्त तन्त्री वाद्य रबाब और सारिंदा का संगीत वैज्ञानिक विश्लेषण किया गया है। गुरमति संगीत की वाद्य परम्परा का एतिहासिक संदर्भ में अध्ययन करें तो श्री गुरु नानक देव जी के द्वारा रबाब का प्रचलन और श्री गुरु रामदास जी और श्री गुरु अर्जुन देव जी द्वारा सारिन्दा का प्रचलन गुरमति संगीत में तन्त्री वाद्यों की परम्परा को प्रत्येा करता है।

गुरमति संगीत में प्रयुक्त तन्त्री वाद्य

रबाब –

गुरमति संगीत परम्परा में रबाब को प्रथम साज कहा जाता है । श्री गुरु नानक देव जी के साथ मरदाना, जो कि गुरु जी के कीर्तन के साथी थे, रबाब बजाया करते थे । ऐसा मत प्रचलित है कि रबाब का आविष्कार श्री गुरु नानक देव

जी ने किया और उन्होंने ही मरदाने को रबाब बजाना सिखाया ।

परन्तु रबाब नामक वाद्य का उल्लेख गुरु जी से पहले लिखे गये फारसी ग्रन्थों में भी मिलता है । यह संभव है कि श्री गुरु नानक देव जी ने उस काल में प्रचलित विदेशी रबाब में कुछ परिवर्तन करके इसे भारतीय राग गायन के लिये अनुकूल बना दिया हो । कानूने मौसीकी के लेखक सादिक अली खाँ ने इस विषय में लिखा है कि ''बाज का कौल है कि यह रबाब ईजाद किया हुआ गुरू शाह नानक फकीर का है । यह ईलम उनको निहायत दखल था । अपनी जिदत तबाय से रबाब ईजाद किया था । 'बाज का कौल' का अर्थ है कई लोगों का मत है । इसीलिये सादिक अली खाँ ने अन्य लोगों के मत के हवाले से ही यह बात लिखी है निश्चित तौर पर कुछ नहीं कहा।

रेबेक, यूरोप में किसी समय लोकप्रिय था 'जो रबाब का ही एक प्रकार था और मूर जाति के द्वारा स्पेन लाया गया था, जिन्होंने अपने लिये इसे फारस और अरब से प्राप्त किया था । यहाँ फिर इसका मूलतया आर्य वाद्य होना प्रमाणित होता है, रबाब पुराने ग्रन्थों के अनुसार वीणा का ही एक प्रकार है । यह आज भी उत्तरी भारत और अफगानिस्तान में लोकप्रिय है ।

इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि रबाब आर्यों का वाद्य था । जिसमें शायद गुरु नानक देव जी ने सुधरात्मक परिवर्तन किये होंगें । यह परिवर्तन भारतीय राग गायन के विशेष तत्त्वों की दृष्टिगत किये गये होंगें क्योंकि सिक्ख कीर्तन शास्त्रीय संगीत पर आधरित था । अपने विदेश भ्रमणों के दौरान श्री गुरु नानक देव जी मरदाने को सदैव अपने साथ रखते । गुरू जी कीर्तन करते तब मरदाना रबाब पर संगति करता था । कुछ विद्वानों के अनुसार रबाब का निर्माण श्री गुरु नानक देव जी ने ही किया है । कैप्टन डे ने रबाब को पंजाब से संबंध मानते हुए लिखा है कि भारतीय रबाब प्रमुख रूप में पंजाब और उत्तरी भारत में बजाया जाता है । दूसरे भागों में इसका प्रयोग मुस्लिमों तक सीमित है । कुछ विद्वानों के अनुसार तानसेन रबाब बजाने में दो थे ।

''तानसेन का जन्म ग्वालियर में हुआ और वो प्रख्यात संगीतकार थे जिन्हें अकबर (1556–1605) ने अपने दरबार में नियुक्त किया । वे अपनी रबाब वादन क्षमता के लिये प्रसिद्ध थे । ''यह कहा जाता है कि भारतीय रबाब मध्य पूर्व में उत्पन्न हुआ और भारत में सर्वप्रथम अकबर के दरबार में तानसेन द्वारा बजाया गया । यह भी हो सकता है कि मियां तानसेन रबाब बजाने में तो निपुण हों पर उन्होंने इसका आविष्कार न किया हो । बी. चैतन्य देव मानते है कि तानसेन ने रबाब का आविष्कार नहीं किया है । तानसेन के जन्म सम्बन्धी खोज कार्य को आचार्य बृहस्पति ने काफी लम्बे समय तक किया परन्तु वे किसी अन्तिम परिणाम पर नहीं पहुँच पाये । उनकी पुस्तकों के अध्ययन से पता चलता है कि तानसेन का जन्म पद्रहवीं शताब्दी के आरम्भ के बीच किसी समय हुआ । परन्तु रबाब का वर्णन तो श्री गुरु नानक देव जी से पहले हुए भक्त कबीर जी ने भी अपनी वाणी में किया है । भक्त कवि कबीर जी का जन्म 15 संवत् 1455 ई. को हुआ । इसलिये यह निश्चित रूप से कहा जा सकता है कि रबाब का आविष्कार तानसेन से पूर्व हो चुका था । यह संभव है कि रबाब के प्रचलन में तानसेन और उनके वंशजों का योगदान रहा हो । परन्तु रबाब को सबसे अधिक भाई मरदाना के साथ सम्बन्धित माना जाता है । वे गुरु नानक के साथी थे जो पन्द्रहवीं शताब्दी के थे । कहा जाता है कि भाई मरदाना अरब से आये हुये एक परिवार के वंशज थे और रबाब बजाने में उनकी दोता एक कहावत बन चुकी है । जो रबाब वे बजाते थे उसे नया रूप श्री गुरु नानक देव जी ने स्वयं दिया था । 19वीं शताब्दी के सादिक अली खाँ कहते है कि रबाब में पाँच मुख्य तारें और बाईस तरब की तारें प्रतिध्वनि उत्पन्न करने के लिये होती हैं । एक अन्य रबाब जिसमें छः तारें होती हैं परन्तु ताँत के बजाय इसमें रेशम के तार हैं । कुछ मतों के अनुसार यह रबाब श्री गुरु नानक शाह फकीर ने बनाई । श्री गुरु नानक इस कला का उच्च ज्ञान रखते थे और यह आविष्कार उनकी अपूर्व बुद्धि का परिणाम है । जब श्री गुरु नानक गहरे चिन्तन में बैठ जाते थे तब मरदाना रबाब बजाता था और तारों से ध्वनि निकलती थी ''निरनकार, धन निरनकार''

कहा जाता है कि रबाब वीणा की प्रकृति का ही वाद्य है । रबाब को नया रूप देने का श्रेय भी श्री गुरु नानक देव जी को जाता है । श्री गुरु नानक देव जी ने पुराने रबाब में कुछ परिवर्तन करके उसे नया रूप प्रदान किया । निस्संदेह यह परिवर्तन वाद्य की ध्वनि बढ़ाने के लिये और इस सुदंर वाद्य की ध्वनि को मधुर बनाने के लिये किये गये होंगें ।

श्री गुरु नानक देव जी के साथ मरदाने के जितने भी चित्र है, उनमें वह रबाब पर आघात के द्वारा स्वर बजाते दिखाये गये हैं । श्री गुरु ग्रन्थ साहिब में रबाब का उल्लेख अनेक स्थानों पर मिलता है जैसे :

– कब को भालै घुँघरू ताला कब को बजावै रबाब ।
आवत जात बार खिन लागै हओ तब लगु समराउ नाम ।

– तूटी तुंत न बजै रबाब । भूलि बिगारिओ अपना काज ।

– फीलु रबाबी बलदु परवावज कउया ताल बजावै ।
पहिरि चोलना गदहा नाचै भैंसा भगती करावै ।

सारिन्दा :– सारिन्दा सांरगी के प्रकार का ही एक वाद्य है । इसे सिक्ख कीर्तन में बजाया जाता है । शुरू में कीर्तन के साथ सारंगी का प्रयोग किया जाता था । परन्तु सारंगी का सम्बन्ध वेश्याओं से होने के कारण इसे एक निम्न वाद्य समझा जाता था । श्री गुरु अर्जुन देव जी ने सारंगी से मिलते जुलते वाद्य का अविष्कार किया और इसका नाम सारिन्दा रखा । एक अन्य मतानुसार गुरु अर्जुन देव जी ने सारिन्दा हाथ में लेकर कीर्तन करने का हुक्म दिया । भाई काहन सिंह नाभा ने भी श्री गुरु अर्जुन देव जी को सारिन्दा का अविष्कारक माना है। यह निश्चित रुप से कहा जा सकता है कि श्री गुरु अर्जुन देव जी ने इसके प्रचार में योगदान अवश्य दिया है । सारिन्दा को गुरुओं के द्वारा प्रयुक्त किये जाने पर इसकी प्रतिष्ठा निश्चय ही बढ़ गई थी । वर्तमान काल में सारिन्दा लुप्त हो चुका है । दरबार साहिब में इस वाद्य के साथ कीर्तन करने वाले अन्तिम सिक्ख रागी महन्त शाम थे । उन्होंने सत्तर वर्ष तक कीर्तन किया ।

इस वाद्य के अन्य वादको में भाई करम सिंह, भाई लाभ सिंह, भाई मंगल सिंह अपने समय के प्रसिद्ध सारिन्दा वादक हुए है । श्री हरिमन्दिर साहिब के अजायब घर में एक

पुराना सारिन्दा रखा हुआ है जो श्री गुरु अर्जुन देव जी के द्वारा बजाया जाता था ।

श्री मति शाहिन्दा बेगम के मतानुसार साजिन्दा देखने में विचित्र वाद्य अमृतसर के गुरु अमरदास जी द्वारा अविष्कृत है, जिन का उस नगर में मन्दिर भलीभांति प्रसिद्ध है । लेखिका ने इस वाद्य का नाम साजिन्दा लिखा है परन्तु आगे दिये गये उसके स्वरूप का विवरण सारिन्दे की भांति ही है । हो सकता है कि इस वाद्य का नाम साजिन्दा ही हो या फिर पुस्तक छापते समय आर के स्थान पर जैड छप गया हो ।

इस वाद्य का प्रयोग जन साधरण की अपेाा सिक्ख कीर्तन में अधिक हुआ है । यह अनुमान लगाना कि यह श्री गुरु अमरदास जी द्वारा अविष्कृत वाद्य है, उचित लगता है । हरिमन्दिर साहिब अमृतसर के अजायब घर में एक पुराना सारिन्दा रखा हुआ है, जो श्री गुरु अर्जुन देव जी द्वारा बजाया जाता था । इस एतिहासिक वाद्य के विषय में कहा जाता है कि जब श्री गुरु अर्जुन देव जी अपने पूर्वजों की वाणी की पोथियाँ प्राप्त करने के लिये गोइन्दवाल में बाबा मोहन जी के पास गये तो बाबा जी उस समय समाधि में लीन थे । गुरु जी ने उनके निवास स्थान के सामने इस वाद्य के साथ शब्द गायन आरम्भ कर दिया, जिस से बाबा मोहन जी ने मंत्र मुग्ध हो कर सभी पोथियाँ उनके हवाले कर दीं । इस घटना का एक चित्र भी गुरुद्वारा गोइंदवाल साहिब में लगा हुआ है ।

केप्टन डे. के अनुसार सारिन्दा ऊँचे स्तर का वाद्य नहीं है परन्तु यह निम्न श्रेणियों में अत्यन्त लोकप्रिय है। सारिन्दे की मुख्य विशेषता इसका पेट चमड़े की झिल्ली के साथ मढ़ने में निहित है। यह केवल इसके अधोभाग के नीचे के हिस्से को ही ढकता है और ऊपर का आध भाग बिल्कुल खुला रहता है।

सारिन्दा का सिक्ख गुरुओं के द्वारा प्रयोग किये जाने से इसकी प्रतिष्ठा निश्चय ही बढ़ गई थी और केप्टन डे का यह कहना कि मुख्यतः रूप में यह निम्न श्रेणी का वाद्य है, वस्तुतः यह उचित प्रतीत नहीं होता । यह बात दूसरी है कि इस समय यह वाद्य दीन–हीन अवस्था में है लेकिन यह भी स्मरण करने योग्य है कि किसी समय सिक्ख गुरुओं के हाथों के स्पर्श से इसने अत्यध्कि प्रतिष्ठा प्राप्त की थी। हिमाचल के मंडी शहर के गुरुद्वारे में गुरु गोबिन्द सिंह द्वारा बजाया गया सारिन्दा आज भी मौजूद है। आजकल पंजाब में इस वाद्य का कोई वादक नहीं है। यह वाद्य पूरी तरह लुप्त हो चुका है और इसके फिर से प्रचलित हो पाने की सम्भावना`ीण है।
परन्तु विष्वविद्यालयों के द्वारा इस वाद्य के पुनरुत्थान हेतु अनेक कार्य किये जा रहे हैं और षिाार्थी इसकी वादन विधि सीखने को प्रयासरत है।

गुरमति संगीत में प्रयुक्त वाद्यों की उपयोगिता व महत्व

गुरमति संगीत में प्रयुक्त तंत्री वाद्यों का सिक्ख ध्र्म में विशिष्ट प्रयोग एक एतिहासिक महत्त्व रखता है। इनका प्रचलन विभिन्न गुरु साहिबानों ने अपने अपने कालों में किया। यह तंत्री वाद्य गुरमति संगीत के विकास का अभिन्न अंग है। गुरु साहिबानों ने इन वाद्यों की मूल प्रकृति व उनके प्रयोगात्मक महत्त्व की दृष्टि के संदर्भ में वादन उचितता प्रदान की। इन वाद्यों का विकासात्मक अध्ययन किया जाये तो यह वाद्य किसी विशिष्ट सामाजिक श्रेणी के वाद्य नहीं थे। इन वाद्यों का जनसाधरण में परिचय बनाने के लिये गुरु साहिबान ने इनको शब्द कीर्तन के लिये प्रचारित किया। इन वाद्यों के इस प्रयोग से जनसाधरण में यह वाद्य परिचित हुए और गुरु साहिबानों ने इन वाद्यों की सह उपयोगिता को बढ़ाने के लिये इनमें कुछ परिवर्तन भी किये। इस संदर्भ में गुरू नानक देव जी द्वारा विशेष किस्म का रबाब तैयार करवाना, गुरू अर्जुनदेव जी द्वारा सरंदा का विकास, गुरु हरगोबिन्द जी के काल में इसराज से ताऊस का निर्माण व प्रचार आदि उक्त धरणा का प्रत्यो प्रमाण है।

गुरमति संगीत के यह तंत्री वाद्य चाहे जवा से बजे या गज से इनकी प्रकृति गम्भीर व नाद का घनत्व गायन के लिये उपयुक्त व सधा हुआ है। जैसे कि हम पहले विश्लेषित कर चुके हैं कि इन तंत्राी वाद्यों का मूल उद्देश्य शब्द कीर्तन का अनुकरण करना है। इस संदर्भ में इनके उपयोगिक महत्व को पहचानना अनिवार्य होगा। गुरमति संगीत में शब्द कीर्तन के रूप में गाई जाने वाली सामग्री वाणी के रूप में है। इस वाणी को व्यक्त करने के लिए विभिन्न भावों का प्रयोग किया गया है। इन भावों के चित्रण के लिये यह राग अति उपयुक्त है। इसी प्रकार राग मल्हार, बसंत, सूही आदि कई रागों में सम्बन्धित वाणी के भाव चित्रण के अनुसार रागों का प्रयोग विलेाणीय है।

गुरमति संगीत में विभिन्न राग रूपों के प्रयोग का प्रयोजन इनकी प्रकृति व स्वरों की विचित्राता हैं। जिनको वाणी के अनुरूप अंकित किया गया है। राग परम्परा के अनुसार यह राग स्वरों के विभिन्न रूप रखते हैं। जैसा कि स्वरों के कोमल, अति कोमल, आन्दोलित, चढ़े हुए या उतरे हुए अनेक स्वर रूप रागों की विलेाण पहचान बनाने के लिये अनिवार्य हैं। गुरमति संगीत में रागों की परम्परा में देखा जाये तो भैरव और गौडी का रिषभ भिन्न–भिन्न हैं। इसी तरह कान्हडा में गन्धर की स्थिति व गौडी के विभिन्न प्रकारों में स्वरों के रूप भिन्न–भिन्न हैं। जिन्हें प्रकट करने के लिये तन्त्री वाद्य ही उपयुक्त हैं। इन तंत्री वाद्यों में स्वर उत्पन्न करने के लिये स्थान वर्तमान फिक्स हारमोनियम स्केल की तरह नहीं होते बल्कि स्वर के शुद्ध व विलेाण स्वरूप को इनमें कायम रखा जा सकता है। तंत्राी वाद्यों की यही महान् विचित्राता व विलेाणता है कि यह रागों के शुद्ध व मौलिक स्वरूप का अनुकरण कर सकते हैं, जिससे राग की शुद्ध प्रकृति भंग नहीं होती। और जब राग का शुद्ध व मौलिक स्वरूप प्रकट होगा तो निश्चय ही शब्द कीर्तन में वाणी के भावों का सही संचार भी होगा।

शब्द कीर्तन में प्रयुक्त आलाप, मींड, कण, खटका आदि सौदंर्य उत्पादक तत्त्वों का हुबहु अनुकरण भी तंत्री वाद्यों पर ही सम्भव है। इसके इलावा तंत्री वाद्यों की अनुकरणात्मक `ामता भी इन तंत्री वाद्यों के उपयोगात्मक महत्व को सदृढ़ करवाते हैं। गुरमति संगीत के शब्द संचार के लिये इन वाद्यों की वादन विधि को इस प्रकार विश्लेषित किया जा सकता है–

सिरी राग तीन ताल

ग			2				
अन्तरा							
—	सं	—	नी	रें	—	सं	—
ऽ	क्र	ऽ	स	र हि	ऽ	ऽ	ऽ
—	सं	—	नी	रें	—	सं	—
ऽ	दा	ऽ	रा	दा	ऽ	रा	अ
—	रें	गं	रें	नी	रें	स	—
ऽ	ज	ञा	ऽ	उ	ऽ	ऽ	ऽ
—	रें	गं	रें	नी	रें	स	—
ऽ	दा	रा	दा	दा	रा	दा	ऽ
—	सं	सं	नी	रें	—	सं	सं
ऽ	अ	ग	िर	चं	ऽ	द िन	
—	सं	सं	नी	रें	—	सं	सं
ऽ	दा	रा	दा	दा	ऽ	दा	रा
—	रें	गं	रे	न ी	रें	स	—
ऽ	च ा	अ	अ	उ	ऽ	ऽ	ऽ
—	रें	गं	रें	नी	रें	स	—
ऽ	दा	रा	दा	दा	दा	रा	

0				3			
—	मे	मे	प	नी	—	सं	सं
ऽ	मो	ती	त	मं	ऽ	द	र
—	मे	मे	प	नी	—	सं	सं
ऽ	दा	रा	दा	दा	ऽ	दा	रा
—	रें रें	रें	रें	रें नी	—	नी रें	—
ऽ	र त	नी	त	हो	ऽ	हि	ऽ
—	रें रें	रें	रें	रे नी	—	नी रें	—
ऽ	दि र	दा	रा	दा	ऽ	रा	ऽ
—	मे मे	प	प	न ी	—	सं	—
ऽ	क स	तु ि	र	कुं	अ	गू	अ
—	मे मे	प	प	नी	—	सं	—
ऽ	दि र	दा	रा	दा	ऽ	रा	ऽ
—	रें	—	रें	रे नी	—	नी रे	—
ऽ	ल ी	ऽ	ि प	अ ा	ऽ	वै	ऽ
—	रें	—	रें	रें नी	—	नी रे	—
ऽ	दा	ऽ	रा	दा	ऽ	दा	ऽ

निष्कर्ष

शोध पत्र में हमने गुरमति संगीत में प्रयुक्त होने वाले तंत्री वाद्यों की परम्परा के संगीत का वैज्ञानिक विष्लेषण करने का प्रयत्न किया है। इस अध्ययन से हमारे सामने प्रत्यक्ष हुआ है कि गुरमति संगीत में प्रयुक्त वाद्य चाहे हिन्दोस्तानी संगीत में प्रचार अधीन है, परन्तु गुरमति संगीत में इनका प्रयोग नवीन एवं विलक्षण है। हिन्दोस्तानी संगीत में इन वाद्यों के प्रयोग का उद्देष्य निरोल कलात्मक है। जबकि गुरमति संगीत में इन वाद्यों का प्रयोग वाणी के संचार के लिये संगीत सहायक के तौर पर किया जाता है, चाहे षब्द कीर्तन सम्बन्धी यह वाद्य स्वतन्त्र रूप में नहीं बजते बल्कि गायन की गई षब्द रचना के विधान की अनुसार हो कर कार्यषील रहती है। गुरमति संगीत में इन वाद्यों का स्वतन्त्र अस्तित्व नहीं बल्कि यह श्री गुरु ग्रंथ साहिब के संगीत प्रबन्ध की समूचे तौर पर अनुगामी है जैसी किसी कीर्तनकार के लिए श्री गुरू ग्रंथ साहिब के संगीत प्रबन्ध वाणी का ज्ञाता होना ज़रूरी है। इसी तरह इन तंत्री वाद्यों के वादको के लिये या कीर्तनकारों के लिये गुणों के इलावा अपने वाद्यों की महारत का होना भी लाज़मी है। गुरमति संगीत के तंत्री वाद्यों के वादन के लिए गुरमति और संगीत की सिद्धि होनी लाज़मी है। शोध पत्र के विचार विर्मष से प्रत्यक्ष है कि गुरमति संगीत में तन्त्री वाद्यों की बुनियादी उपयोगिता एवं महत्व है। अद्भुत होने के साथ ही वैज्ञानिक भी है।

संदर्भ

1. ***तपफसीले–ए–मौसिकी,*** मुहम्मद अहपफजल खां, अचीपसन कालेज, लाहौर, 1931. – पृ. 85
2. ***पंजाब की संगीत परम्परा,*** डा. गीता पेंतल, राध पब्लीकेशन, नई दिल्ली, 1988. – पृ. 270, 280, 290
3. ***भारतीय संगीत,*** राम अवतार वीर, वीर संगीत प्रकाशन, नई दिल्ली, 1986
4. ***भारतीय संगीत का इतिहास,*** डा. शरचचन्द्र श्रीध्र परांजपे, चौखम्बा विद्या भवन चौक, वाराणसी, दूसरा संस्करण, 1985
5. ***भारतीय तालों का शास्त्रीय विवेचन,*** डा. अरूण कुमार सेन, हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, मध्य प्रदेश, प्रथम संस्करण, 1973 पृ. 181
6. ***संगीत शास्त्रा,*** के. वासुदेव शास्त्री, हिन्दी समिति, सूचना विभाग, लखनऊ ;उ.प्रद्ध, 1968. पृ. 149
7. ***भारतीय संगीत कोष,*** विमलकाँत राय चौध्री, भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन, नई दिल्ली, 1975 पृ. 70

पत्रिकाएं:

संगीत, संगीतकार्यलय हाथरस, ;उ.प्रद्ध

संगीत, गुरमति संगीत अंक ;संकलकद्ध डा. गुरनाम सिंह ;संपाद्ध डा. लेमी नारायण गर्ग, संगीत कार्यलय, हाथरस, जनवरी–पफरवरी 1997.

समाजिक विज्ञान दर्पण, मार्च 1972.

8. ***गुरमति संगीत, प्रबन्ध ते पासार,*** गुरनाम सिंह ;डा.द्ध पब्लीकेशन बिऊरो, पंजाबी युनीवर्सिटी, पटियाला 2000 1973 पृ. 159, 163
9. ***भारतीय संगीत कोष,*** विमलकाँत राय चौध्री, भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन, नई दिल्ली, 1975 पृ. 70
10. ***सिक्ख ध्र्म अते संगीत,*** ए. ऐस. चौहान, पंजाब युनिर्वसिटी, चण्डीगढ़ 1982 पृ. 62, 64.
11. ***विस्माद नाद,*** ;संपाद्ध डा. गुरनाम सिंह, अक्तूबर 1992.
12. ***गुरु शब्द रत्नाकर महान् कोष,*** भाई काहन सिंह नाभा, नैशनल बुक शाम, पलईअर गार्डन मारकिट, चांदनी चौंक, दिल्ली, द्वितीय संस्करण 1996 पृ. 128, 171, 816, 925.
13. ***वादन कला – प्रो,*** तारा सिंह सूरजीत कौर, पंजाबी युनिवर्स्टी 2004, 270
14. ***श्री गुरू ग्रन्थ साहिब – आसा. महला*** 4, पृ. 368, 477, 478, 1272, 1140
15. ***गुरमति संगीत ते हुण तक मिली खोज, ;प्रथम भागद्ध*** – पृ. 31
16. ***Indian Music,*** Shahinda Begom Fuzee Rehamin, William Merchant & Co. The Cupil Gallery, 5 Regent Street,
London, 1914. Page 77
17. ***Musical Insruments,*** B.C. Deva, National Book Trust India, A-5 Green Park, New Delhi, Third Reprint, 1993. Pg. 129
18. ***Musical Instruments of India - History and Development,*** Ram Avtar Vir, Pankaj publications, Cambridge Book Depot, 3 Regal Building, New Delhi-I, 1983. Pg. 129
19. ***Sikh Sacred Music,*** Sikh Sacred Music Society, A-209, Defence Colony, New Delhi-3, 1967.Pg. 59, 61
20. ***Sri Guru Granth Sahib, 4 Vols, English version,*** (Trans. by Dr. Gopal Singh, Gurdas Kapoor & Sons Pvt. Ltd.,
Delhi, 1960.
21. ***String Instruments of North India,*** Sharmistha Ghosh, Eastern Book Linkers, 5825, New Chandrawal, Jawahar, Nagar, Delhi, 1988.
22. ***The Music and musical Instruments of Southern India and Deccan,*** C.R. Day, Low price publicatins, 425, Nimri, Ashok Vihar, Phase IV, Delhi, Reprinted 1990. Pg. 126, 127
23. ***The Music of India : Legend and History,*** H.A. Popley, Award Publishing House, Darya Ganj, Delhi, 1986.
Pg. 115-119
24. ***The Mirror,*** Shikhar Hattangadi, J.C. Jain Sons Vartaman Press, Samachar Marg, Fort, Bombay, May 1980. Pg. 95
25. **Thesis:** ***The Nature and place of music in Sikh Devotional Music and its affinity with Hindustani Classical Music,*** Dr. A.S. Paintal, faculty of Music & Fine Arts, Delhi University, Delhi, 1971. Pg. 354